गोपाल कृष्ण गोखले का शिक्षा चिंतन

रश्मि श्रीवास्तव*

गोपाल कृष्ण गोखले ने भारत के सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक विकास का मूलाधार शिक्षा को माना और शिक्षा के क्षेत्र में न्यायसंगत उपलब्धता पर ध्यान केंद्रित कर अनिवार्य तथा नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा की अवधारणा हमारे सामने रखी। वह एक राजनेता होने के साथ-साथ अर्थशास्त्र के विद्वान भी थे। शिक्षा के क्षेत्र में माँग और पूर्ति के संतुलन हेतु आने वाली वित्तीय जटिलता के लिए उन्होंने राज्य व स्वैच्छिक संस्थाओं के सम्मिलित प्रयास को स्वीकृति दी। उन्होंने शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर शिक्षा की उपलब्धता, उसकी उपादेयता को देश के आर्थिक विकास के साथ समायोजित करने के उपाय भी बताए। शैक्षिक प्रशासन संबंधी उनके विचारों में हमें उनकी प्रशासनिक दक्षता देखने को मिलती है। प्रस्तुत लेख में उनके शिक्षा-संबंधी विचारों की विस्तृत विवेचना की गई है।

गोपाल कृष्ण गोखले को एक ऐसे व्यक्तित्व के रूप में जाना जाता है जिसने राजनीति में नैतिक मूल्यों को बड़ा ऊँचा स्थान दिया था। वह एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ, समाज सुधारक तथा शिक्षाविद् थे। वे स्वयं एक शिक्षक भी थे अत:, जन साधारण के लिए शिक्षा के महत्त्व को भली-भांति जानते थे। ब्रिटिश शासनकाल में ही उन्होंने प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क तथा अनिवार्य बनाए जाने पर बड़ा ज़ोर दिया। इसके लिए उन्होंने राजनीतिक स्तर पर भी बड़े प्रयास किये। यद्यपि शासन के विरोध के कारण उन्हें वांछित सफलता नहीं मिल सकी थी। गोखले के शिक्षा-दर्शन की विवेचना के क्रम में आवश्यक है कि उनके जीवन परिचय, उनके व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर भी दृष्टि डाली जाये।

* *विभागाध्यक्ष* (बी.एड.) हीरा लाल यादव बालिका डिग्री कॉलेज, सरोजिनी नगर, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

जीवन परिचय

गोपाल कृष्ण गोखले का जन्म, 9 मई 1866 को कोल्हापुर में हुआ था। उनका पालन-पोषण धार्मिक वातावरण में हुआ। दस वर्ष की अवस्था तक वे गाँव में रहे और वहीं उनकी शिक्षा हुई। वे दो भाई और चार बहनें थे। वह मात्र 13 वर्ष के थे जब उनके पिता का देहांत हो गया। अत: उनका लालन-पालन कठिन परिस्थितियों में हुआ। 1884 में एलफिंसटन कॉलेज में स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात पूना के एक स्कूल में वह अँग्रेज़ी के अध्यापक नियुक्त हुए। यह स्कूल आगे चलकर फर्ग्युसन कॉलेज के रूप में प्रसिद्ध हुआ। वह इस कॉलेज से 1902 में प्रिंसिपल के पद से सेवानिवृत्त हुए।

उन्होंने अपना सार्वजनिक जीवन जस्टिस राना डे के शिष्य के रूप में प्रारंभ किया था। उन्होंने एजुकेशन सोसाइटी की मात्र 75 रुपये प्रतिमाह पर 20 वर्ष तक सेवा की। यहीं उनका बाल गंगाधर तिलक, आगरकर आदि से निकट संपर्क हुआ। उन्होंने अनेक वर्षों तक 'सार्वजनिक सभा' पत्रिका का संपादन किया। वे 'सुधारक' के सम्पादक भी रहे। वे इतिहास तथा अर्थशास्त्र के पंडित थे। उन्होंने 1897, 1905, 1906, 1908, 1912, 1913 तथा 1914 में इंग्लैंड की यात्रा की। वहाँ रहकर उन्होंने देशहित में अनेक कार्य किये। इंग्लैंड में ही उन्होंने भारतीय कांग्रेस की 'ब्रिटिश समिति' तथा उसके पत्र 'इण्डिया' को गतिशील बनाया और इस संदर्भ में सर विलियम बैडनबर्न का सहयोग प्राप्त किया।

गोखले ने 1889 में ही कांग्रेस में प्रवेश कर लिया था। 1895 में ही वह कांग्रेस के मंत्री बन गए थे और वर्षों तक वह कांग्रेस की बम्बई शाखा के मंत्री रहे। 1902 में गोखले केंद्रीय विधान परिषद् के सदस्य निर्वाचित हुए। उन्होंने इस सदस्यता का लाभ भारतीय जनता तक पहुँचाने का प्रयास किया। परिषद में उनके द्वारा प्रस्तुत बजट भाषण बड़े ही व्यवहारिक तथा तर्कपूर्ण होते थे। उनके विचारों व सुझावों पर शासन की प्रतिक्रिया भी हुआ करती थी। उन्होंने परिषद् के सदस्य के रूप में भारतीय जनता की आवाज़ उठाते हुए जिन मुद्दों को आगे रखा उनमें प्रमुख मुद्दे थे, नमक कर को हटाना, अनिवार्य प्रारंभिक शिक्षा की शुरुआत, सरकारी नौकरियों में भारतीयों के साथ भेदभाव न बरतना, सरकारी व्यय कम करना आदि। गोखले ने लॉर्ड कर्जन के प्रतिक्रियावादी सुधारों का विरोध किया किंतु उनके विरोध के बावजूद भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम, प्रेस अधिनियम व शासकीय गोपनीयता अधिनियम बनाए गए। लार्ड कर्जन गोखले की विधायी प्रतिभा के प्रशंसक थे।

1905 में बनारस कांग्रेस के सभापति निर्वाचित होने के पश्चात उन्होंने बहिष्कार का समर्थन किया, यद्यपि उनका मानना था कि इसका प्रयोग तभी किया जाये जब कोई दूसरा विकल्प ना हो। 1907 के सूरत विच्छेद के बाद वह कांग्रेस के क्रिया-कलापों की महत्त्वपूर्ण धुरी बने और नरम दल के नेता के रूप में अनेक वर्षों तक कांग्रेस का दिशा-निर्देश करते रहे। सन् 1912 में भारतीयों की समस्या का अध्ययन करने वह स्वयं दक्षिण अफ्रीका गए जहां

गांधी जी से उनका संपर्क हुआ। आगे चलकर गाँधी जी ने उन्हें अपना राजनीतिक गुरू स्वीकार किया। उन्होंने एक दैनिक पत्रिका 'ज्ञान प्रकाश' का प्रकाशन पूना से किया था। इस पत्रिका के माध्यम से वह अपनी राजनैतिक एवं सामाजिक विचारधारा को जनता के समक्ष रखा करते थे। उनका सार्वजनिक जीवन निष्ठामय व त्यागपूर्ण था और वह सही अर्थों में 'सादा जीवन उच्च विचार के पोषक' थे। आजीवन जनता के हित में अंग्रेज़ी सरकार की नीति का विरोध करने के बावजूद वे सरकार के लिए श्रद्धा व सम्मान का पात्र बने रहे जो कि उनकी विनम्रता का प्रतीक था। उनके नि:स्वार्थ सेवाभाव के लिए देश आज भी उनका कृतज्ञ है। 19 फरवरी 1915 को 49 वर्ष की आयु में इस महान देशभक्त ने महाप्रयाण किया। गोखले एक व्यवहारिक आदर्शवादी थे। लार्ड मैकाले ने गोखले का मूल्यांकन करते हुए कहा था–'उनका मस्तिष्क एक राजनीतिज्ञ का मस्तिष्क था और उनमें शासन के उत्तरदायित्व की भावना व्यक्त थी।' प्रसिद्ध लेखक रामधारी सिंह दिनकर स्वीकार करते हैं कि तिलक एक ऐसे राजनेता थे जो विदेशियों पर ज्ञान, तर्क और प्रेम से विजय पाना चाहते थे।[1]

गोपाल कृष्ण गोखले के शैक्षिक विचार

गोखले के जीवन परिचय पर दृष्टि डालने पर हम देखते हैं कि विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक गतिविधियों में संलिप्त गोखले के व्यक्तित्व में एक आदर्श शिक्षक के गुण विद्यमान थे। लगभग 20 वर्षों तक बहुत कम वेतन पर शिक्षक के रूप में कार्य करते हुए उन्होंने शिक्षण के प्रति, अपने समर्पण एवं निष्ठा का परिचय दिया था। शिक्षा के संबंध में उनकी धारणा व्यापक थी और उसमें विषय ज्ञान के अतिरिक्त प्रशासन की जानकारी, तकनीकी, कौशल, स्वास्थ्य, सांप्रदायिक एकता, बंधुत्व एवं समानता, लोकतांत्रिक आंदोलनों का ज्ञान, अध्ययन व लेखन शामिल था।

12 जून, 1905 को गोखले द्वारा 'सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया' सोसाइटी की स्थापना में हमें भारत में शिक्षा संबंधी सुधार की उनकी इच्छा व कल्पना देखने को मिलती है इस संस्था के अन्य उद्देश्यों के साथ शैक्षणिक कार्यक्रमों में विशेषकर स्त्री शिक्षा, पिछड़ी जातियों की शिक्षा, औद्योगीकरण तथा शास्त्रीय शिक्षा में सहायता देना भी था। वह जन सामान्य की शिक्षा के महत्त्व से भली–भाँति परिचित थे और भारत की विभिन्न समस्याओं की जड़ अशिक्षा को मानते थे। वह अंग्रेज़ी शासन द्वारा भारत में किये जा रहे शिक्षा व्यवस्थापन से संतुष्ट न थे। उन्होंने कहा भी था कि हमारे लिए विदेशी शासन का अभिशाप इससे अधिक और क्या हो सकता है कि भारतवर्ष के पाँच गाँवों में से चार में पाठशाला नहीं है और आठ बालकों में से सात बालक अज्ञान में डूबे पड़े हैं। गोखले के बजट संबंधी भाषणों में तथ्यों की अधिकारपूर्ण व्याख्या तथा आधारभूत निर्देशक सिद्धांतों की पकड़ देखने को मिला करती थी। शिक्षा के क्षेत्र में भी उन्होंने यह पकड़ बनाए

1. दिनकर, रामधारी सिंह, 2005, *संस्कृति के चार अध्याय,* लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.–470

रखी और प्रशासनिक स्तर पर शिक्षा संबंधी सुधार की अनेक योजनाएँ प्रस्तुत कीं, इनमें से प्रमुख निम्नवत हैं:

1. शैक्षिक व्यवस्थापन तथा प्रबंधन

किसी भी देश की शिक्षा व्यवस्था का एक प्रधान पहलू उसके व्यवस्थापन व प्रबंधन के स्वरूप का होता है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार की नीति ही यदि दोषपूर्ण हो, उसके प्रावधान का स्वरूप यदि उचित ना हो तो आगे का कार्य जटिल होगा। गोखले ने अंग्रेज़ी शासन की अवधि में एक शिक्षक के रूप में जीवन-यापन किया था। वह शिक्षा के क्षेत्र में व्याप्त तत्कालीन प्रशासकीय समस्याओं से भली-भांति परिचित थे। यही कारण है कि उनके भाषणों में हमें भारत में फैली अशिक्षा, व्यवस्थित शिक्षा-प्रबंध का अभाव, सरकार द्वारा शिक्षा की अवहेलना आदि की चर्चा देखने को मिलती है। वे शिक्षा को केंद्रीय विषय बना कर राज्य का दायित्व बना देना चाहते थे किंतु यहाँ सरकार पर ही निर्भर रहने को उचित ना मानकर स्वैच्छिक प्रयासों को भी आवश्यक मानते थे। उनका मानना था कि इस कार्य हेतु देश का धनी वर्ग आगे आये।

उन्होंने अँग्रेज़ सरकार द्वारा घोषित महंगी शिक्षा का विरोध किया था। वह शिक्षा को राष्ट्र निर्माण की आधारशिला मानते थे। वह देश की शिक्षा-व्यवस्था के प्रति सरकार की संवेदनशीलता से कोई समझौता करने के पक्ष में नहीं थे। उन्होंने कहा भी था–'जनता की नैतिक तथा भौतिक उन्नति के साधनों से मेरा अभिप्राय यह है कि सरकार ने शिक्षा के लिए क्या किया है और सफाई, कृषि की उन्नति आदि के लिए क्या किया है।'

वे चाहते थे कि गृह विभाग में एक स्वतंत्र शिक्षा सचिव हो तथा बाद में वायसराय की कार्यकारिणी परिषद् में एक शिक्षा सदस्य अलग से शामिल किया जाये। शिक्षा के प्रति सरकार के उत्तरदायित्व तथा स्वैच्छिक प्रयासों के सम्मिलित तालमेल का सिद्धान्त स्वतंत्र भारत में बड़ा ही लाभकारी सिद्ध हुआ है। आज भारत में प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक हम इस समायोजन के लाभकारी परिणाम देख पा रहे हैं। गोखले ने इसकी कल्पना वर्षों पूर्व पराधीन भारत के सामाजिक वातावरण में ही कर ली थी।

गोखले ने विश्वविद्यालयों पर सरकारी नियंत्रण करने वाले वायसराय कर्ज़न के इण्डियन यूर्निवसिटी एक्ट (1904) का विरोध किया था। वह उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी राज्य एवं निजी स्रोतों के धन का भारी नियोजन चाहते थे।

2. नि:शुल्क तथा अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा

गोखले उच्च कोटि के विद्वान, अच्छे अध्यापक तथा एक कुशल वक्ता थे। देश की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक उन्नति को शिक्षा के साथ जोड़ते हुए वह देश के जन-जन तक शिक्षा का प्रसार किये जाने के इच्छुक थे। यही कारण है कि उन्होंने देश में अनिवार्य एवं नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा की माँग अंग्रेजी सरकार के समक्ष रखी। वह इंपीरियल लेजिसलेटिव काउंसिल के सदस्य के रूप में भारतीय जनता के हित में

अपनी आवाज़ अंग्रेज़ सरकार के समक्ष उठाने में कभी पीछे न रहे। अपनी इस विचारधारा को सरकार तक पहुँचाने के लिए उन्होंने इस सदस्यता का आश्रय लिया और 19 मार्च 1910 को उन्होंने इस सभा में प्राथमिक शिक्षा संबंधी अपना प्रस्ताव प्रस्तुत किया। प्रस्ताव में कहा गया था कि यह सभा सिफ़ारिश करती है कि संपूर्ण देश में प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क तथा अनिवार्य बनाने का कार्य प्रारंभ किया जाये और इस संबंध में निश्चित प्रस्तावों को उपस्थित करने के लिए सरकारी और गैर-सरकारी अधिकारियों का एक संयुक्त आयोग शीघ्र ही नियुक्त किया जाये।

अनिवार्य तथा नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा का यह प्रस्ताव छोटे बच्चों की शिक्षा के प्रति उनकी संवेदना को प्रकट करता है। अपने इस प्रस्ताव में उन्होंने सरकार को अनेक सुझाव दिये जो कि इस प्रकार थे—

1. जिन क्षेत्रों मे 33 प्रतिशत बालक शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, इनमें 6 से 10 वर्ष तक की आयु के बालकों के लिए शिक्षा नि:शुल्क तथा अनिवार्य कर दी जाये।
2. इस शिक्षा का व्यय स्थानीय संस्थाएँ और सरकार 1:2 के अनुपात में वहन करे।
3. प्राथमिक शिक्षा की देखभाल के लिए एक मंत्री की नियुक्ति की जाये।
4. बजट में प्रतिवर्ष शिक्षा की प्रगति का स्पष्ट वर्णन किया जाये।
5. केंद्र के प्राथमिक शिक्षा के लिए एक पृथक विभाग स्थापित किया जाये, जो प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के लिए एक योजना बनाए।

गोखले ने बड़े उत्साह के साथ अपनी ओजपूर्ण भाषा में यह प्रस्ताव सभा के समक्ष रखा था। अंग्रेज सरकार को अनुमान था कि गोखले का यह प्रस्ताव जनता के लिए तो बड़ा लाभकारी होगा किंतु सरकारी लाभ-हानि की दृष्टि से यह प्रस्ताव पूरी तरह से भारतवासियों के पक्ष में था। अंग्रेजों के लिए इसमें लाभ के अंश न्यून थे अत: अँग्रेजी सरकार ने फ़िलहाल इस संकट को ज्यादा हवा देना उचित ना समझा। उन्होंने गोखले को आश्वासन दिया कि सरकार इस प्रस्ताव पर अवश्य विचार करेगी। गोखले कुछ संतुष्ट हुए किंतु 1वर्ष बीत जाने के पश्चात इस संदर्भ में कुछ सकारात्मक पहल होते ना देख वे पुन: सक्रिय हुए और 16 मार्च 1911 को उन्होंने केंद्रीय धारा सभा के समक्ष प्राथमिक शिक्षा संबंधी अपना विधेयक प्रस्तुत किया।

1911 के प्राथमिक शिक्षा विधेयक में हमें शिक्षा व्यवस्थापन के क्षेत्र में गोखले की प्रशासकीय दक्षता देखने को मिलती है। उन्होंने देश की मांग, उसकी जरूरत का सामंजस्य प्रशासकीय मांग एवं पूर्ति के साथ बड़ी सहजता से स्थापित किया। शिक्षा के किसी भी स्तर की व्यवस्था में वित्त व उत्तरदायित्व का संयोजन बड़ा महत्त्वपूर्ण होता है। गोखले ने यह तालमेल प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में स्थापित करने का मार्ग सुझाया। उन्होंने विधेयक द्वारा सरकार को सुझााव दिये–

1. अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के अधिनियम को उन स्थानीय बोर्डों के क्षेत्रों में लागू किया जाये जहाँ के बच्चों का एक निश्चित प्रतिशत प्रारंभिक विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर रहा है। इस प्रतिशत को निश्चित करने का अधिकार गवर्नर जनरल की परिषद् को हो।
2. स्थानीय बोर्ड सरकार की पूर्ण स्वीकृति प्राप्त करके इस अधिनियम को लागू कर सकते हैं।
3. प्राथमिक शिक्षा के व्यय के लिए स्थानीय बोर्ड शिक्षा कर लगा सकते हैं।
4. अभिभावकों के लिए 6 से 10 वर्ष तक की उम्र के बालकों को प्राथमिक विद्यालयों में भेजना अनिवार्य हो। यदि वे इस नियम का उल्लंघन करें तो उन्हें दंडित किया जाये।
5. पहले यह अधिनियम बालकों की शिक्षा के लिए लागू किया जाये उसके बाद बालिकाओं की शिक्षा के लिए लागू हो।
6. जिस अभिभावक की आय ₹ 10 मासिक से कम हो, उससे शिक्षा शुल्क न लिया जाये।
7. अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का व्यय भार स्थानीय बोर्डों और सरकार द्वारा वहन किया जाये। सरकार संपूर्ण व्यय का दो तिहाई भाग दे।

विधेयक के प्रस्तुतीकरण के साथ गोखले ने अपनी विनम्रता को भी स्वयं से दूर ना किया उन्होंने अंग्रेज़ी सरकार को इसे स्वीकृत किये जाने का विनम्र अनुरोध करते हुए कहा था—'श्रीमान जी, संक्षेप में मेरा यह सम्पूर्ण विधेयक है। अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा यात्रा के प्रथम चरणों के सम्बन्ध में सुझाव देने का यह लघु एवं तुच्छ प्रयास है।' केंद्रीय सरकार ने उनके इस विनम्र अनुरोध का विनम्र प्रतिवाद करते हुए इस विधेयक को जनमत संग्रह के लिए विश्वविद्यालयी, प्रांतीय सरकारों एवं कुछ व्यक्तिगत संस्थाओं के पास भेज दिया।

इस विधेयक पर दो दिन की बहस के पश्चात यह विधेयक 13 वोटों के विरूद्ध 38 वोटों में गिरा दिया गया। अर्थात् 51 सदस्यों में से केवल 13 ने इसका समर्थन किया। सरकारी प्रवक्ता हर्टाग बटलर ने इस विधेयक का विरोध किया था। पं. मदन मोहन मालवीय तथा मोहम्मद अली जिन्ना भी उस समय इम्पीरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल के सदस्य थे उन्होंने इस विधेयक का समर्थन किया किंतु भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों ने सरकार के पक्ष में मत दिया।

गोखले का यह विधेयक यद्यपि तत्कालीन परिस्थितियों में ज्यों-का-त्यों स्वीकृत नहीं हो सका था। किंतु उनके इस प्रयास का प्रभाव शून्य था ऐसा भी हम नहीं कह सकते हैं। उनके इस विधेयक से प्रसारित संदेश ने भारतीय पुनर्जागरण के प्रवाह को सकारात्मक दिशा दी। इस विधेयक द्वारा वह भारतीय जनमानस में शिक्षा प्राप्ति के अवसरों की संभावनाओं का बीजारोपण कर सके थे। एक मीठा स्वप्न वह हम सब के बीच अवश्य प्रवाहित कर सके थे। आगे चलकर स्वतंत्र भारत में इस स्वप्न को साकार करने हेतु अनेक सकारात्मक प्रयास किये गए। तत्कालीन

परिस्थितियों में भी इस विधेयक ने पारित ना हो सकने के बावजूद बड़ी हलचल पैदा की थी। सभी राजनीतिक दलों ने इसका समर्थन किया था अत: 1910-1917 के बीच प्राथमिक शिक्षा हेतु गैर-सरकारी प्रयासों में तेज़ी आई। सरकार ने भी जनता के बीच अपनी छवि साफ़-सुथरी रखने के लिए प्राथमिक शिक्षा की ओर कुछ ध्यान दिया। 1911 में ब्रिटिश पार्लियामेंट में भारतीय अंडरसेक्रेटरी को प्राथमिक शिक्षा के प्रति यथेष्ट ध्यान देने का निर्देश दिया गया।

अनिवार्य तथा नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा के गोखले के स्वप्न को स्वतंत्र भारत में बड़ा ही ऊँचा स्थान मिला। भारतीय संविधान की धारा 45 में यह घोषणा की गई कि संविधान लागू होने के समय से 10 वर्ष की अवधि के अंदर 14 वर्ष तक के बच्चों की अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त किया जाये।

गोखले की अनिवार्य तथा नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा की कल्पना सभ्य, सुसंस्कृत व आधुनिक समाज के निर्माण का मूल मंत्र है। यह व्यवस्था समाज के प्रत्येक वर्ग को एक ऐसे दायरे में ले आती है जहाँ सभी को अपनी उन्नति के समान अवसर प्राप्त हो सकेंगे।

3. सशक्त तकनीकी तथा उच्च शिक्षा व्यवस्था

प्राथमिक शिक्षा के बाद उनका अगला प्रयास तकनीकी एवं उच्च शिक्षा के लिए था। गोखले का मानना था कि तकनीकी शिक्षा पर भारत का औद्योगिक तथा आर्थिक विकास टिका हुआ है अत: इसके लिए एक आयोग स्थापित किया जाये तथा आवश्यक बजट का प्रावधान किया जाये। जब केंद्रीय सरकार ने कृषि क्षेत्र में अनुसंधान, प्रशिक्षण आदि के लिए 20 लाख रुपयों का प्रावधान किया तो उन्होंने उसे सराहते हुए तकनीकी क्षेत्रों के लिए अधिक धन देने की मांग की।[2] वह भारत में तत्कालीन उच्च शिक्षा की व्यवस्था से पूरी तरह संतुष्ट ना थे। उन्होंने कहा था 'उन्नीसवीं शताब्दी के विश्वविद्यालय उच्च कोटि के विद्वानों तथा वैज्ञानिकों के उत्पादन में मौलिक चिन्तन एवं अन्वेषण से पूर्णरूपेण असफल रहे हैं तथा उचित शिक्षा सम्बन्धी इनकी धारणाएँ बड़ी संकीर्ण हैं। परंतु इसके लिए उन्हें दोषी ठहराना न्यायसंगत नहीं जान पड़ता क्योंकि उनकी स्थापना ही भिन्न उद्देश्यों से की गई थी।' गोखले उच्च शिक्षा के माध्यम से भारतीय युवाओं की सोच को उदारवादी तथा आधुनिक बनाना चाहते थे और उन्हें रूढ़िवादिता की ज़ंजीरों से मुक्त कराना चाहते थे। उन्होंने कहा भी था कि देश की समस्याएँ इतनी जटिल हैं जो शायद किसी अन्य देश में न होंगी। देश में अनेक विभाजन हैं। देश का एक बड़ा वर्ग अनपढ़ है। और पुराने संस्कारों से इस कदर लिपटा हुआ है कि किसी भी सामाजिक परिवर्तन की बात उनको समझाना बहुत मुश्किल है।[3]

उच्च शिक्षा को इस मनोवृत्ति से उबारने का

2. शर्मा, बी.एम., शर्मा, रामकृष्ण दत्त, शर्मा, सविता, 2005, *भारतीय राजनीतिक विचारक,* रावत पब्लिकेशन्स, नयी दिल्ली, पृ.-231
3. सरस्वती, सी.एन., 1992, *भारतीय राजनीतिक चिन्तन,* मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ.-86-87

माध्यम बनाते हुए उन्होंने कहा था–'आधुनिक परिस्थितियों के अनुसार यदि यह शिक्षा सर्वश्रेष्ठ है तो भी उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। मेरा विश्वास है कि लोगों का जीवन चाहे राजनैतिक, सामाजिक, औद्योगिक, मानसिक किसी भी क्षेत्र में हो, एक सामूहिक इकाई है। आधुनिक शिक्षा का महानतम कार्य शिक्षा को इतना प्रोत्साहन देना नहीं, जितना भारतीय मस्तिष्क को पुरानी दुनिया के विचारों से मुक्त कराना है।'

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोपालकृष्ण गोखले ने भारत के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक विकास का मूलाधार, शिक्षा को माना और शिक्षा के क्षेत्र में न्यायसंगत उपलब्धता पर ध्यान केंद्रित कर अनिवार्य तथा निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा की अवधारणा हमारे सामने रखी। वह एक राजनेता होने के साथ-साथ अर्थशास्त्र के विद्वान भी थे। शिक्षा के क्षेत्र में मांग तथा पूर्ति के संतुलन हेतु आने वाली वित्तीय जटिलता के लिए उन्होंने राज्य व स्वैच्छिक संस्थाओं के सम्मिलित प्रयास को स्वीकृति दी और शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर शिक्षा की उपलब्धता, उसकी उपादेयता को देश के आर्थिक विकास के साथ समायोजित करने के उपाय भी बताए। शैक्षिक प्रशासन के संबंध में उनके विचारों में हमें उनकी प्रशासकीय दक्षता देखने को मिलती है। वह एक सक्रिय समाज सुधारक नहीं थे किंतु वे भारतीय समाज में जागृति, समानता, प्रगति, आधुनिकता एवं राष्ट्रीय भावनाओं का विकास चाहते थे। उनका मानना था कि भारत को एक उन्नतिशील राष्ट्र बनाने के लिए जातिगत भेदभाव, अस्पृश्यता और असमानता को मिटाना आवश्यक है। उनका मानना था कि भारतीयों को स्वयं आगे आ कर अपनी सामाजिक बुराइयों, अंधविश्वासों, रूढ़ियों, एवं राग-द्वेष की दुर्भावनाओं का परित्याग करना चाहिए। वह इन सबके लिए शिक्षा को एक सशक्त माध्यम के रूप में प्रयुक्त करना चाहते थे।